अध्याय प्रथम

शोध परिचय

अध्याय प्रथम

शोध परिचय

1.1 प्रस्तावना

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा 2005 के अनुसार बच्चें उसी वातावरण में सीख सकते हैं जहाँ उन्हें लगे की उन्हें महत्वपूर्ण माना जा रहा हैं। हमारे स्कूल आज भी सभी बच्चों को ऐसा महसूस नहीं करवा पाते। सीखने का आनंद व संतोष के साथ रिश्ता होने की बजाए भय, अनुशासन व तनाव से संबंध हो तो यह सीखने के लिए अहितकारी होता हैं।

सभी बच्चों की स्वतंत्र खेलों, अनौपचारिक व औपचारिक खेलों, योग और खेल गतिविधियों में सहभागिता उनके शारीरिक व मनो–सामाजिक विकास के लिये आवश्यक हैं। बच्चे खेल, एथलेटिकस, जिम्नास्टिक, योग एवं प्रदर्शन कलाओं, जैसे–नृत्य कला आदि में दक्षता के उच्च स्तरों को भी प्राप्त कर सकते हैं। लेकिन जब ध्यान आनन्द से हटकर उपलब्धि पर चला जाए तो प्रशिक्षण ऐसे अनुशासन व अभ्यास की माँग करता है जो तनाव पैदा कर सकता है।

स्वतंत्र विचार प्रक्रिया और समस्या हल करने के लिये विविध तरीकों को प्रोत्साहित करने वाले चुनौतीपूर्ण कार्य शिक्षार्थियों में स्वतंत्रता, रचनात्मक और आत्मानुशासन को प्रोत्साहित करते है।

शिक्षार्थी केवल ऐसे छोटे बच्चे नहीं होते जिनके लिये वयस्कों को कुछ हल ढूढ़ने होते हैं। वे अपनी परिस्थितियों व जरूरतों के सूक्ष्म पर्यवेक्षक होते है। उन्हें अपनी शिक्षा व भावी अवसरों से संबंधित समस्याओं के हल की प्रक्रिया तथा विचार– विमर्श में भाग लेना चाहिए। बच्चों को अपनी मानसिक योग्यता को विकसित करने के लिये प्रोत्साहित किया जाना चाहिए ताकि वे स्वतंत्र रूप से तर्क व विचार कर सकें और असहमत होने का साहस रखें।

जब बच्चे और शिक्षक बिना परखे जाने के भय के अपने व्यक्तिगत या सामुहिक अनुभव बाँटते है, उन पर चिंतन करते हैंतब वे विभिन्नताओं से डरने के बजाए उन्हें समझ पाते हैं।

उपरोक्त बातों पर अगर ध्यान दिया जाये तो बालकेन्द्रित शिक्षा का महत्व ध्यान में आता है।

1.2 बाल केन्द्रित शिक्षा

बाल केन्द्रित शिक्षा को अधिगमकर्ता केन्द्रित शिक्षा भी कहा जाता हैं। इसमें शिक्षण प्रक्रिया शिक्षक केन्द्रित न होकर बालक केन्द्रित होती हैं। वास्तविक रूप में बाल केन्द्रित शिक्षा का उद्देश्य अधिगमकर्ता में स्वायत्ता (Automony) व आत्मनिर्भरता (Indonendense) विकसित करना हैं।

बाल केन्द्रित अनुदेशन योग्यता व प्रवीणता तथा अभ्यास/व्यवहार पर ध्यान केन्द्रित करता है जो आजीवन अधिगम तथा स्वतंत्र रूप से समस्या का समाधान करने पर अपना बल देता है।

बाल केन्द्रित शिक्षा में बालक कि रूचि का विशेष ध्यान रखा जाता है व बालक कि आवाज कक्षा का केन्द्र बिन्दु होती हैं। बाल केन्द्रित शिक्षा में बालक कि रूचि, योग्यता, सीखने की प्रवृत्ति (learning style) वशिक्षक एक सुविधाप्रदायक के रूप में होता हैं। जान डीवी जीन पियाजे, लेव व्यागोत्सकी, कार्लरोजर, मारिया मोंटेसरी, गीजूभाई, इन सभी के विचारों में बाल केन्द्रित शिक्षा के पुट समाये हुए हैं।

इसका प्रमुख आशय यह है कि यदि बालक को स्वतंत्रता प्रदान की जाय तो वह अपनी रूचि को स्वयं तलाश लेता है तथा अपनी क्षमताओं का विकास संभव सीमा तक कर सकता है।

इवान इलिच बीसवीं शताब्दी का एक ऐसे विचारक है जिन्होंने शिक्षा, चिकित्सा उद्योग, यौन विज्ञान एवं शैक्षिक मनोविज्ञान आदि क्षेत्रों में अनेक स्थापित मापदण्डों, मुहावरों एवं मान्यताओं को खण्डित किया है। उनकी सर्वाधिक चर्चित कृति ''डी–स्कूलिंग सोसायटी'' है

जिसमें उन्होंने शिक्षा के संस्थायीकरण, ज्ञान के अनुशासनजन्य कारावासीकरण एवं एकान्तीकरण के विरूद्ध यह रचना समग्र सामाजिक, आर्थिक, वैज्ञानिक एवं मूल्यगत संदर्भो के साथ जब आज के बौद्धिकों के बीच उपस्थित होती है तो सदियों प्रचलित प्रविधियों, प्रणालियों व प्रक्रियाओं के स्तम्भ हिल उठते हैं।

''स्कूल किस प्रकार ज्ञान के प्रमाणीकरण/प्रमाण–पत्रीकरण और पाठ्यक्रमों के बेतुके श्रेणी–करण को प्रश्रय देते हैं और इस प्रकार सीखने के इच्छुक बालक को किस प्रकार उसकी सर्जनात्मकता, चिंतन शक्ति एवं अन्वेषण क्षमता से उद्भूत सार्थक प्रयासों से वंचित करते हैं।''

स्कूल उन परिस्थितियों का संयोजन करने के ही काबिल नहीं है जो हासिल किये गये हुनर के मुक्त और अन्वेषक उपयोग को प्रोत्साहन दें जिसके लिए मेरे पास विशिष्ट संज्ञा है। ''मुक्त शिक्षा''। इस अयोग्यता का प्रमुख कारण यह है कि स्कूल बाहयकारी है, स्कूल, स्कूली–पढ़ाई के लिए स्कूली धंधा है, स्कूल अनिवार्य हाजिरों के जोर पर शिक्षकों के तले दबे रहने का और तज्जन्य जैसी जबरदस्ती का अधिक संदिग्ध विस्तार हैं।

जिस तरह हुनर प्रशिक्षण को पाठ्यक्रमगत खिंचवा से मुक्त रहना चाहियेउसी तरह मुक्त शिक्षा के लिए अनिवार्य उपस्थिति की बाध्यता नहीं होनी चाहिए। कौशल अधिगम और आविष्कारक एवं रचनात्मक शिक्षा दोनों हो, संस्थाओं संयोजना से मदद लें सकते हैं। लेकिन वे भिन्न और विपरीत प्रकृति के ही हैं।

स्कूलों में बालक का विकास एक पाठ्यक्रमानुसार किया जाता है जो बालक कि क्षमताओं को सीमाओं में बांधकर रखते है तथा बालक के विकास में बाधित होते है। जबकि स्वतंत्रता पूर्वक प्रदान की शिक्षा रूचि को जागृत करती है, जिज्ञासाओं का पालन–पोषण करती है तथा संपूर्ण विकास की ओर ले जाती है जहाँ बालक आनंद की अनुभूति करता हैं।

इवान इलिच का स्कूले से तात्पर्य अवकाश के युग से है जहाँ बच्चा स्वतंत्रतापूर्वक व्यवहार कर सकें। ए.एस. नील की सोच भी इवान इलिच जैसी ही थी। इस सोच को साकार करने हेतु उन्होंने एक स्कूल का निर्माण किया जिसका नाम समरहिल है।

1.3 समरहिल एवं उसका दर्शन

एलेक्जेण्डर सदरलैण्ड नील (1883-1973) जिन्होंने कई वर्षो तक सामान्य स्कूलों में पढ़ाने के बाद अपनी पत्नी के साथ मिलकर एक ऐसा स्कूल बनाने का फैसला किया जो मनो विश्लेषण की खोजों को मनुष्य कि एक पीढ़ी को पालने में लागू करके दिखा सकें। एक ऐसा स्कूल बच्चे जहाँ जैसे है वैस ही होकर जी सकें। 1921 में जर्मनी में शुरू होने के बाद समरहिल नाम का यह स्कूल अंततः लंदन के पास एक गाँव सॅफोल्क में सन् 1923 में स्थापित हुआ और आज तक बना हुआ है। उसमें 5-15 वर्ष की आयु के लगभग 60-70 बच्चे हर साल रहते हैं।

यह पूरी तरह से आवासी स्कूल रहा है और उसका मूल मंत्र है स्वतत्रंता। स्वतंत्रता पर दो तरह के अंकुश भी हैं- एक बच्चों कि सुरक्षा के लिये जरूरी समझे गये नियम और दो, स्कूल कि आमसभा द्वारा तय किये गये नियम। स्कूल में लागू अनुशासन वे है जो सब मिलकर बनाते हैं, चाहे तो उन्हें बदलते भी हैं।

समरहिल स्कूल के चालीस वर्षो के अनुभव को नील ने इस किताब में प्रस्तुत किया हैं। स्वशासन, शिष्टाचार, सहशिक्षा, काम, खेल, नाटक, संगीत, धर्म, सेक्स, भय, हीनभावना, कल्पनालोक, झूठ आज्ञापालन, सजा, खिलौने, पैसे, अपशब्दों का प्रयोग, यौन-निर्देशन आदि अनेकों बातें जो अभिभावकों को परेशान करती हैं, इस पुस्तक के माध्यम से नील इन सबके संबंध में अपना नजरिया और बच्चों के साथ हुए तमाम वास्तविक अनुभवों को तमाम अभिभावकों के सामने रखते हैं।

समरहिल से निकले आत्मसंचालित, स्वनिर्देशित बच्चों के आगे के जीवन का ब्यौरा देते हुए नील यह प्रमाणित करते है कि आजादी और स्वनिर्देशन से किसी मनुष्य का कभी नुकसान नहीं हुआ हैं।

प्रसिद्ध मनोविश्लेषक सिगमंड फ्रॉयड के सिद्धांतों से प्रभावित होते हुए नील बार-बार यह व्याख्या करते हैं कि बचपन की स्वाभाविक रुचियों के लगातार दमन के कारण मनुष्य में कुंठाए और नफरतें बसती हैं, जो संसार की अमानवीयता और क्रूरता का कारण बनती है। हालाँकि आज मनोविज्ञान की दुनिया में फ्रॉयड की इन प्रारंभिक मान्यताओं से आगे बढ़ते

हुए यह स्वीकार किया जाता है कि सामाजिक, राजनैतिक प्रक्रियाओं के विकास का अपना सिलसिला भी होता है और बाहर की ये सारी दुनिया मनुष्य के अंदर की इच्छाओं, खासकर यौन इच्छाओं, के दमन का प्रतिफल मात्र नहीं हैं। फिर भी फ्रॉयड की कई धारणाएँ आज भी मनोविज्ञान में मूल्यवान मानी जाती हैं। जैसे, अचेतन विचारों व भावों का मनुष्य के काम पर असर पड़ता है, बचपन के अनुभवों का आगे जाकर व्यक्तित्व निर्माण में असर पड़ता है बचपन की यौन इच्छाओं से चिन्ताएँ और असुरक्षा के भाव पैदा होते हैं। इस परिप्रेक्ष्य में समरहिल का यह दस्तावेज अपना महत्व का आकर्षण बनाये हुए हैं।

एरिक फ्रॉम के द्वारा लिखे हुए आमुख के अनुसार समरहिल स्कूल के दर्शन और व्यवहार ने यूरोप और अमेरिका में कई मिलते-जुलते प्रयोगों को प्रेरित किया। 1973 में अपनी मृत्यु तकनील इस स्कूल को संचालित करते रहे। उनके बाद उनकी दूसरी पत्नी एना ने 1985 तक इसका प्रभार संभाला। 1985 से वर्तमान तक उनकी बेटी जोई इस स्कूल का संचालन कर रही हैं। अपनी शुरूआत से अब तक यह स्कूल मूल रूप से अपरिवर्तित रहा है। नील द्वारा लिखी यह किताब समरहिल संयुक्त राज्य अमेरिका के विश्वविद्यालयों में मनोविज्ञान और शिक्षा के पाठ्यक्रमों में शामिल की जाती रही हैं।

समरहिल समाज की समस्याओं का समाधान तो नहीं पेश करता है, पर शिक्षा के व्यापक उद्देश्यों के तहत एक मूल्यवान अनुसंधान जारी रखे हुए हैं।

शिक्षा और समाज के सही स्वरूप की तलाश में संघर्षरत् लोगों को ऐसे कई अनुभवों से सीखकर, अपने रास्ते चुनतेहैं। जिस समय समरहिल स्कूल विकसित हो रहा था। सोवियत रूस में एक नए समाज की शिक्षा के लिए प्रयोग चल रहे थे। भारत में उस दौर में गाँधी, रवीन्द्रनाथ टैगोर, कृष्णमूर्ति, गीजूभाई ने प्रयोग किए। बच्चों के लालन-पालन और विकास के बारे में जहाँ इन सभी प्रयासों में कुछ मूलभूत समानताएँ थी, वही अंतर भी थे। बच्चों की निहित अच्छाई और ईमानदारी में विश्वास, बौद्धिक के साथ-साथ भावनात्मक विकास पर जोर, स्वप्रेरणा, स्वतत्रंता, स्वअनुशासन व सामुहिक अनुशासन पर जोर, अपनी रचनात्मकता और ऊर्जा को निखारते हुए कुछ बनने और समाज को योगदान देने पर जोर

इनके पुट सभी के प्रयासों में दिखते हैं। पर अनुशासन के स्वरूप में अंतर है, विचारधाराओं को दिए जाने वाले महत्व में अंतर है, बचपन की व्याख्या में भी अंतर हैं।

ए.एस.नील की प्रणाली बालक के लालन–पालन का कांतिकारी तरीका है। मेरी राय में उनकी पुस्तक इसलिए बेहद महत्वपूर्ण है क्योंकि वह भयमुक्त शिक्षा के सच्चे सिद्धांतों का प्रतिनिधित्व करती हैं। समरहिल किसी सिद्धांत को प्रतिपादित नहीं करता। बल्कि चालीस वर्षो के वास्तविक अनुभवों का वर्णन करता हैं। नील की प्रणाली में अन्तर्निहित सिद्धांतों को पुस्तक में सहजता और स्पष्टता से प्रस्तुत किया गया है। संक्षेप में ये सिद्धांत हैं–

1. नील का बालक की अच्छाई में दृढ़ विश्वास हैं। वे मानते हैं कि एक औसत बच्चा जन्म से अपंग, कायर और आत्महीन मानव–मशीन नहीं होता। बल्कि उसमें जीवन के प्रति प्रेम, जीवन में रूचि की संपूर्ण संभावनाएँ होती हैं।
2. शिक्षा का ध्येय या जीवन का ध्येय है प्रसन्नता से काम करना और आनंद को तलाश पाना। नील के अनुसार आनंद का अर्थ है जीवन में रूचि लेना। यही बात मैं दूसरे शब्दों में यू कहना चाहूँगा–जीवन के प्रति महज दिमागी प्रतिक्रिया न कर अपने समग्र व्यक्तित्व से जुड़ना।
3. शिक्षा में सिर्फ बौद्धिक विकास पर्याप्त नहीं है। शिक्षा बौद्धिक के साथ–साथ भावनात्मक भी हो, यह जरूरी है। आधुनिक समाज में बुद्धि और भावना में अंतर कमशः बढ़ता जा रहा है। आज मानव के अनुभव उसकी आंतरिक भावनाओं से आँखों से देखकर या कानों से सुनकर नहीं होते। वे अनुभव मुख्यतः दिमागी होते हैं।
4. शिक्षा बच्चे की आत्मिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाली होनी चाहिए। बच्चा परोपकारी नहीं होता। परोपकारिता तब विकसित होती है जब वह बचपन पार कर लेता है।
5. सख्ती से लागू किया गया अनुशासन भय पैदा करता है।
6. आजादी का अर्थ स्वेच्छाचार नहीं होता है।
7. शिक्षक की वास्तविक निष्कपटता।
8. अपराधबोध मुख्यतः बच्चों को सत्ता से जोड़ने का कार्य करता है।
9. समरहिल किसी प्रकार की धार्मिक शिक्षा नहीं देता है।

वास्तव में नील बालक को ऐसे शिक्षित करने की कोशिश करते ही नहीं की बच्चा मौजूदा व्यवस्था में बखूबी फिट हो जाए। बल्कि उनका प्रयास बच्चों को ऐसे पालने–पोसने का है जिससे वे प्रसन्न इंसान बन पाएँ।

1.3.1 स्वतंत्रता की प्रकृति

स्वतत्रंता से तात्पर्य स्वेच्छाचार से नहीं है। स्वतत्रंता का वास्तविक अर्थ बच्चे को अपनी वास्तविक रूचि तलाश पाने से हैं। बच्चे के प्राकृतिक रूप से पलने–बढ़ने से है, ताकि वक्त आने पर वह अपनी रूचियों को तलाशकर उसमें सफलता पा सकें व अपनी क्षमताओं का जहाँ तक संभव हो दोहन कर सकें।

बच्चे के लिये आजादी इसलिये जरूरी हैं क्योंकि आजादी में हीवह स्वाभाविक तरीके से बढ़ता है जो अच्छा तरीका हैं। जीवन का उद्देश्य आनंद है तथा यह आनंद स्वतंत्रता के माध्यम से ही संभव है। आजादी देने से तात्पर्य बच्चे को उसकी जिन्दगी जीने देना है। आजादी से तात्पर्य बच्चों को बंधनों से मुक्त करना, गुलामी, दबाव, अप्रिय परिस्थितियों से मुक्त करना तथा मुक्त स्वभाव से जीने देने से हैं।

1.3.2 स्वशासन

समरहिल एक स्वशासित शाला है, जिसका स्वरूप लोकतांत्रिक हैं। सामूहिक जीवन से जुड़ी सभी बातों को, जिसमें सामाजिक अपराधों की सजा भी शामिल है, शनिवार की आमसभा में वोट द्वारा तय किया जाता हैं। हर एक शिक्षक और बच्चे का एक–एक वोट होता है, फिर चाहे उसकी उम्र कुछ भी हों। शिक्षक और एक सात साल के बच्चे के मत का दर्जा समान है।

1.3.3.1 बच्चों की परवरिश

बच्चे की परवरिश उसके जीवन का एक अति महत्वपूर्ण हिस्सा है। यह परवरिश ही उसके भविष्य को निर्धारित करने में मद्द करती हैं। अतः परवरिश के आधार पर बच्चों को दो भागों में बाँटा जा सकता है।

1.3.3.1 अमुक्त बच्चा

एक साँचे में ढ़ला हुआ, अनुकूलित, अनुशासित, दमित बालक यानी अमुक्त बच्चा जो असंख्य है, दुनिया के हर कोने में बसता है। वह हमारे शहर में, सामने वाली गली में रहता हैं। वह एक उबाऊ स्कूल में एक उबाऊ मेज पर बैठता है। वह सहमा होता है, अधिकारियों की आज्ञा का पालन करता है, आलोचना से डरता है। उसमें सामान, परम्परावादी और सही बने रहने की कट्टर इच्छा होती हैं उसे जो कुछ पढ़ाया गया है, वह बिना सवाल किए स्वीकारता है और बाद में वह अपनी तमाम ग्रंथियाँ, अपनी कुण्ठाएँ अपने बच्चों को विरासत में देता हैं।

मनोवैज्ञानिकों का मानना है कि बच्चे को अधिकतर मानसिक नुकसान उसकी जिन्दगी के पहले पाँच सालों में पहुँचता है। इस अमुक्ति की शुरूआत जन्म से ही प्रारंभ होती हैं। सभ्यता के सभी बच्चे जीवन निन्दा के वातावरण में जन्मते हैं जो समयानुसार बच्चों के खिलाने-पिलाने की बात करते हैं, वे मूलतः आनन्दविरोधी हैं। वे अपने बच्चे को अनुशासित तरीके से खिलाना-पिलाना चाहते हैं। सभ्यता का असल उद्देश्य तो बच्चों को एक ऐसे अनुशासित जीवन में ढालता है जो आनन्द से पहले कर्तव्य को रखें।

1.3.3.2 मुक्त बच्चा

दुनिया में स्वनिर्देशित बच्चे इतने कम हैं कि उनके वर्णन का कोई भी प्रयास अंतरिम ही हो सकता है। इसके जो परिणाम देखे गए हैं उनसे एक नई सभ्यता के जन्मने का संकेत मिलता है। ऐसी सभ्यता जिसका चरित्र किसी भी राजनैतिक दल द्वारा तयकिए गए समाज से भिन्न होगा। स्वसंचालन में मानव स्वभाव की अच्छाइयों में विश्वास निहित हैं। इसकी जड़ में यह विश्वास है कि न कोई मूल पाप है, न कभी था।

स्वनिर्देशन का मतलब है शिशु का मुक्त रूप से जीने का अधिकार। जहाँ बाहरी मानसिक व दैहिक अनुशासन न हों। बच्चा जो ऐसे वातावरण में पला होता है जहाँ कहीं कोई भय न हो।

1.4 अध्ययन का महत्व एवं आवश्यकता

विद्यालयों में कुछ ऐसे बच्चे जो खेल-कूद गतिविधियों में बेहतर तथा शैक्षिक उपलब्धि में सामान्य होते हैं। वहीं इसके विपरीत कुछ बच्चे शैक्षिक उपलब्धि में बेहतर होते है परन्तु अन्य गतिविधियों में वे अन्य बालकों से पीछे होते है तथा ऐसे बालक सामाजिक जीवन में असमायोजन को महसूस करते हैं। प्रथम प्रकार के बालक अपने जीवन में समायोजित होते है तथा जल्द ही नई परिस्थितियों पर काबू पा लेते हैं। तथा ये बालक अपने भावी जीवन में आनंदपूर्वक रहते हैं व सफलता अर्जित करते है। द्वितीय प्रकार के बालक की अपेक्षा ये बालक ज्यादा सफल होते हैं। अगर उपरोक्त कथन सही माना जाये तो यह जानना अत्यंत महत्वपूर्ण है की क्या भारतीय समाज में यह कथन लागू होता हैं। समरहिल में दी गई मुक्त तथा अमुक्त बालकों की व्याख्या को ध्यान में रखते हुये प्रस्तुत अनुसंधान में मुक्त तथा अमुक्त बालकों की पहचान करने की कोशिश की गई, साथ ही यह भी जानने की कोशिश की गई है की मुक्त तथा अमुक्त बालकों की उपलब्धि शैक्षिक विषय क्षेत्रों में अच्छी है या फिर सह-शैक्षिक। इसके पीछे के कारण भी जानना आवश्यक है। इसलिये प्रस्तुत अनुसंधान को मूर्त रूप दिया गया है।

1.5 समस्या कथन

"कक्षा 10वीं के मुक्त एवं अमुक्त विद्यार्थियों का शैक्षिक तथा सह-शैक्षिक विषय क्षेत्रों में उपलब्धि का अध्ययन"

1.6 शब्दाबलियों की परिभाषा व स्पष्टीकरण

- **मुक्त विद्यार्थी** :ऐसे विद्यार्थी जो स्वनिर्देशित होते हैं, तथा स्वसंचालन के माध्यम से परिस्थितियों पर कम समय में नियंत्रण पा लेते हैं व उनमें मानव स्वभाव की अच्छाई निहित होती हैं। इन विद्यार्थियों के परवरिश ऐसे वातावरण में होती है जहाँ उन्हें स्वसंचालन का अधिकार प्रदान किया जाता है, तथा बाहरी मानसिक व दैहिक अनुशासन नहीं होता हैं।
- **अमुक्त विद्यार्थी** : ऐसे विद्यार्थी जिनकी परवरिश ऐसे वातावरण में हुई हो जहाँ मानसिक व दैहिक अनुशासन हो, जिसके कारण वह अनुकूलित, अनुशासित

एक साँचे में ढ़ला हुआ (पुराने रिति-रिवाज या मान्यताओं का अनुसरण करने वाला) दमित (महत्वकांक्षाओं पर प्रतिबंध) हो जाता है, अमुक्त विद्यार्थी कहलाते हैं।

- **शैक्षिक विषय क्षेत्र :** शैक्षिक विषय क्षेत्रों में विषय आधारित विशिष्ट क्षेत्रों को शामिल किया जाता हैं। इस विषय क्षेत्र में विद्यार्थी के संज्ञानात्मक विकास पर ध्यान दिया जाता हैं, तथा निम्न विषयों का अध्ययन कराया जाता हैं। उदाहरण- विज्ञान, सामाजिक विज्ञान, गणित, हिन्दी, अंग्रेजी।
- **सह-शैक्षिक क्षेत्र :** सह-शैक्षिक विषय क्षेत्रों में जीवन कौशल पाठ्य-सहगामी गतिविधि, अभिवृत्ति एवं मूल्यों को शामिल किया जाता हैं। ऐसे विषय क्षेत्रों के माध्यम से विद्यार्थी के शारीरिक व भावनात्मक पक्ष के विकास पर बल दिया जाता हैं। उदाहरण- खेल गतिविधियाँ, सांस्कृतिक गतिविधियाँ तथा लेखन संबंधी गतिविधियाँ आदि।

1.7 अध्ययन के उद्देश्य

1. मुक्त तथा अमुक्त विद्यार्थियों की पहचान करना।
2. मुक्त एवं अमुक्त विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन करना।
3. मुक्त तथा अमुक्त विद्यार्थियों की सह-शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन करना।

1.8 परिकल्पनाएँ

1. कक्षा 10वीं के मुक्त तथा अमुक्त विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अंतर नहीं है।
2. कक्षा 10वीं के मुक्त तथा अमुक्त विद्यार्थियों की सह-शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

1.9 अध्ययन की सीमाएँ

1. प्रस्तुत शोध कार्य म.प्र. राज्य के भोपाल संभाग के विद्यालयों बहुउद्देश्यीय प्रदर्शनीय विद्यालय, आर.आई.ई. व जय हिन्दी कान्वेट विद्यालय नेहरू नगर पर आधारित हैं।

2. प्रस्तुत शोध कार्य समरहित नामक पुस्तक के द्वारा उद्वेलित विचारधारा पर आधारित है।

3. प्रस्तुत शोध व्यक्तिगत विचारधारा पर आधारित हैं।